Q. जैन-दर्शन जीव या आत्मा संबंधी विचार का वर्णन करें।

Explain the jaina Theory of Jiva and Soul.

Ans. जिस सत्ता को अन्य भारतीय दर्शन में आत्मा कहा गया है उसी को जैन-दर्शन में जीव कहा गया है।

जैनों के अनुसार चेतन द्रव्य को जीव कहा जाता है। चैतन्य जीव का मूल लक्षण है। यह जीव में सर्वदा वर्तमान रहता है। चैतन्य के अभाव में जीव की कल्पना सम्भव नहीं है इसलिए उसे "चेतना लक्षणों जीवः" से परिभाषित किया गया है। यह जीव संबंधी विचार न्याय वैशेषिक के आत्मा विचार से भिन्न है। न्याय वैशेषिक ने चैतन्य को आत्मा का आगन्तुक लक्षण माना है परन्तु जैनों ने चैतन्य को आत्मा का स्वभाव माना है।

चैतन्य जीव में सर्वदा अनुभूति रहने के कारण जीव को प्रकाशमान माना जाता है। वह अपने तथा दूसरों को प्रकाशित करता है।

जीव नित्य है जो शरीर में नहीं पायी जाती है, क्योंकि शरीर नाशवान है जीव और शरीर में इस विभिन्नता के अलावे दूसरी विभिन्नता यह है कि जीव का आकार नहीं है, जबकि शरीर आकारयुक्त है।

जीव ज्ञाता है वह भिन्न-भिन्न विषयों का ज्ञान प्राप्त करता है परन्तु स्वयं ज्ञान का विषय कभी नहीं होता।

जीव कर्ता है वह सभी सांसारिक कर्मों को करने में भाग लेता है वह सभी

कर्मों को स्वतंत्र रूप से करता है।

जीव भोक्ता है, जीव अपने कर्मों का फल स्वयं भोगने के कारण सुख और दुख की अनुभूतियाँ प्राप्त करता है। जैनों के अनुसार जीव स्वभावतः अनन्त है। जीव में चार प्रकार के पूर्णताएँ पायी जाती है अनन्त चतुष्टय कहा गया है।
(i) अनन्त ज्ञान (ii) अनन्त दर्शन (iii) अनन्त वीर्य (iv) अनन्त सुख।

जीवन में जीव बंधनग्रस्त हो जाते हैं तो उनमें ये गुण अभिभूत हो जाते हैं। इस गुण के अतिरिक्त जीव में यह गुण भी है कि वह अमूर्त होने के बावजूद मूर्ति ग्रहण कर लेता है। अतः उसे अस्तिकाय द्रव्यों के वर्ग में रखा गया है। जीव के इस स्वरूप की तुलना एक दीपक से की जा सकती है। प्रकाश का कोई आकार ~~आकार~~ नहीं होता पर वह जिस कमरे में जलता है उस कमरे के आकार का प्रकाश का भी कुछ-न-कुछ आकार हो जाता है। कमरा छोटा होगा तो आकार भी छोटा होगा और कमरा बड़ा होगा तो प्रकाश का आकार भी बड़ा होगा। इसी तरह अगर जीव एक हाथी में है तो उसका आकार विस्तृत होगा और अगर एक चींटी में होता तो उसका आकार भी संकीर्ण होगा।

जैनों का मत है कि आत्मा का विस्तार सम्भव है, जीव का विस्तार शरीर को घेरता नहीं है लेकिन शरीर के समस्त भाग में अनुभव होता है। जैनों के अनुसार जीव दो प्रकार के होते हैं—

(i) बद्ध जीव (ii) मुक्त जीव ।

(i) बद्ध जीव – बद्ध जीव इस आत्माओं को कहा जाता है कि जो बंधनग्रस्त हो ।

(ii) मुक्त जीव – मुक्त जीव इस आत्माओं को कहा जाता है जो मोक्ष को प्राप्त किया हो ।

बद्ध जीव को दो अंगो में बाँटा गया है – (i) स्थावर और (ii) त्रस ।

(i) स्थावर जीव गतिहीन जीव को कहा जाता है ये जीव पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और वनस्पति में पाये जाते हैं। उनके पास स्पर्श ज्ञानेन्द्रिय होते हैं और वह स्पर्श को। अतः इन्हें एकेन्द्रिय जीव कहा जाता है। इन्हें केवल स्पर्श का ज्ञान होता है।

(ii) त्रस जीव वे है जो गतिशील है। ये निरन्तर विश्व में भटकते रहते हैं। त्रस जीव विभिन्न प्रकार के होते हैं। इस त्रस जीवों में दो ज्ञानेन्द्रिय होती है। घोंघा, सीप दो इन्द्रियवाले जीव है। जिन्हें केवल स्पर्श और स्वाद की अनुभूति होती है।

कुछ त्रस जीवों में पाँच ज्ञानेन्द्रिय पायी जाती है जिनमें मनुष्य, पशु, पंछी आते हैं जिन्हें स्वाद, स्पर्श, गंध, दृष्टि और शब्द की अनुभूति होती है।

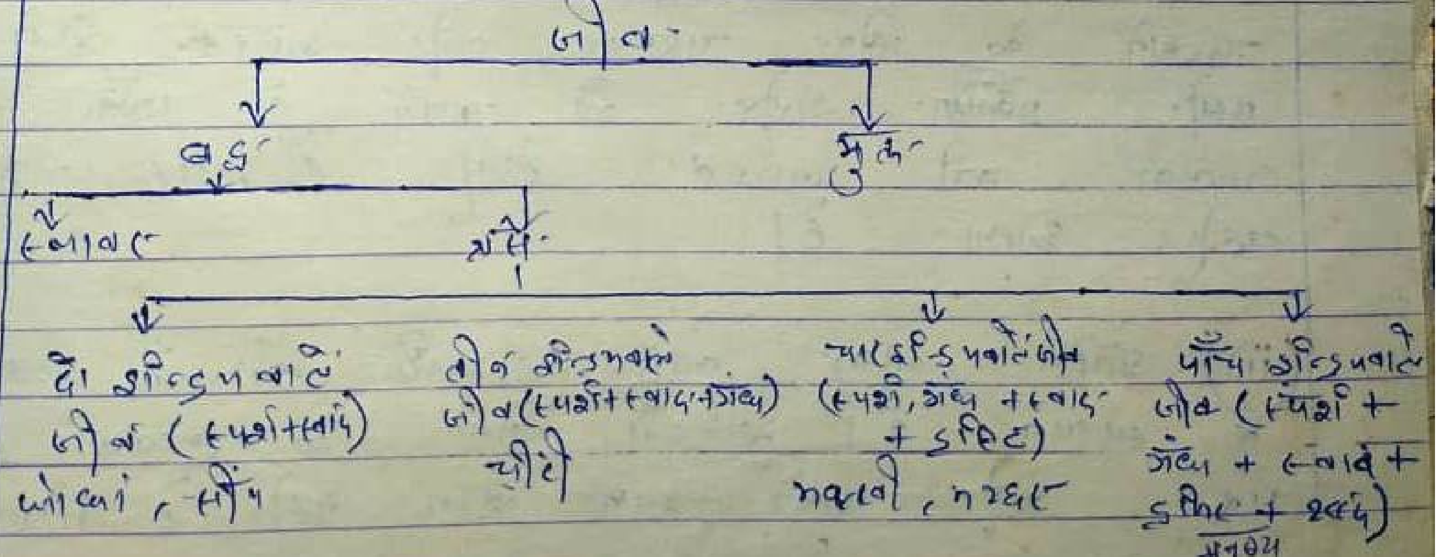

जैनों ने जितने जीवों को माना है सभी चेतन हैं परन्तु भिन्न-भिन्न कोटि के जीवों में भिन्न-भिन्न चैतन्य की मात्रा है। कुछ जीवों में चेतना विकसित रहती है तो कुछ जीवों में चेतना अविकसित रहती है। मुक्त जीवों में चेतना विकसित रहती है। स्थावर जीवों में चेतना अविकसित रहती है।

जैन-दर्शन जीव के अस्तित्व को सिद्ध निम्नलिखित प्रमाण प्रस्तुत करता है।

(i) किसी भी वस्तु का ज्ञान उसके गुणों को देखकर होता है। जब हम कुर्सी के गुणों को देखते हैं तो उन गुणों को धारण करनेवाले पदार्थ के रूप में कुर्सी का ज्ञान प्राप्त करते हैं, इसी प्रकार आत्मा के गुणों को जैसे - चेतना, सुख, दुःख, संदेह, स्मृति इत्यादि प्रत्यक्ष अनुभूति होती है तो इन गुणों के आधार पर जीव का प्रत्यक्ष अनुभव हो जाता है। इस प्रकार जीव के गुणों को देखकर जीव के अस्तित्व का प्रत्यक्ष ज्ञान हो जाता है।

(ii) शरीर को मनुष्य अपनी इच्छा के अनुरूप परिचालित करता है। जिस प्रकार मशीन को चलाने के लिए चालक की जरूरत होती है, इसी प्रकार शरीर को चलाने के लिए एक चालक की जरूरत होती है, वह चालक वही आत्मा है।

(iii) आँख, नाक, कान इत्यादि इन्द्रियाँ ज्ञान के साधन हैं। इन्द्रियाँ ज्ञान के साधन होने पर भी अपने-आप ज्ञान नहीं दे सकती।

इसे ज्ञान के लिए अवश्य ही कोई-न-कोई साधन है जो उसे ज्ञान देता है। वह ज्ञान दाता ही जीव ही है।

(iv) प्रत्येक शरीर के लिए विशेष प्रकार के पुद्गल की आवश्यकता होती है। ये पुद्गल कण शरीर निर्माण में कार्य नहीं है। इसका रूप और आकार देने के लिए एक निमित्त कारण की आवश्यकता होती है वह निमित्त कारण जीव ही है। अतः जीव के अभाव में शरीर का निर्माण असम्भव है।

जीव के बिना शरीर का निर्माण सम्भव नहीं होगा।